भारत में समाजवाद और नेहरु

Socialism in India and Nehru

नमूना • SAMPLE

नमूना • SAMPLE

भारत में समाजवाद और नेहरु

Socialism in India and Nehru

डॉ. उषा कुमारी

नमूना • SAMPLE

अखण्ड पब्लिशिंग हाऊस
दिल्ली (भारत)

द्वारा प्रकाशित



अखण्ड पब्लिशिंग हाऊस

Publisher, Distributor, Exporter having an Online Bookstore

एल-9ए, प्रथम तल, गली न. 42,
सादतपुर एक्सटेंसन, दिल्ली-110094 (भारत)
Phone : 9968628081, 9555149955, 9013387535
E-mail : akhandpublishinghouse@gmail.com
akhandpublishing@yahoo.com
Website : www.akhandbooks.com

भारत में समाजवाद और नेहरु
Socialism in India and Nehru

संस्करण : 2019
© लेखक
ISBN: 978-93-88998-69-7

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस प्रकाशन के किसी भी हिस्से को प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इलेक्ट्रॉनिक या किसी अन्य माध्यम द्वारा पुनः प्राप्ति समेत किसी भी रूप में प्रतिलिपिकृत, अनुवादित, संग्रहीत नहीं किया जा सकता है और न ही किसी भी रूप में या किसी भी माध्यम द्वारा इसे प्रसारित किया जा सकता है।

इस पुस्तक में लेखक द्वारा व्यक्त विचार उनके व्यक्तिगत हैं जिसका प्रकाशक से कोई संबंध नहीं है।

भारत में प्रकाशित

झपसू यादव द्वारा 'अखण्ड पब्लिशिंग हाउस' के लिए प्रकाशित। वी.एम. ग्राफिक, दिल्ली द्वारा कवर डिजाइन व शब्द संयोजन तथा आरना इंटरप्राइजेज, दिल्ली से मुद्रित।

SAMPLE COPY

प्रस्तावना

यूरोप में उन्नीसवीं शताब्दी में समाजवाद का उदय और उत्कर्ष एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना है। समाजवाद एक ऐसी विचारधारा है जो एक नवीन समाज और संस्कृति को जन्म देती है। समाजवाद का लक्ष्य एक ऐसे समाज का निर्माण करना है जिसमें किसी व्यक्ति या जाति विशेष को कोई विशिष्ट अधिकार और शक्ति नहीं हो, अपितु सभी समानता और बंधुत्व के रूप में बंधे हो, ऐसे समाज में ''समाज'' के सभी सदस्यों को समान रूप से विकसित करने का प्रयास किया जाता है। इसमें समाज को महत्व दिया जाता है, न कि व्यक्ति को। समाजवाद समानता को समतल करने वाला साधन है। यह समाज में न केवल राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक समानता का पक्षधर है बल्कि उत्पादन के साधनों और पूँजी पर ऐसे नियंत्रण के पक्ष में है जिससे समाज के सभी वर्गों को समान रूप से लाभ हो और धन सम्पन्न और निर्धन लोगों का अन्तर दूर हों। समाजवाद का उद्देश्य समाज की आर्थिक शक्तियों का संगठन करना है और मनुष्यों द्वारा उसका नियन्त्रण करना है। यह भूमि, सम्पत्ति और उत्पादन कें साधनों पर सामूहिक स्वामित्व का पक्षधर है, उन पर समस्त समाज का स्वामित्व हो, न कि किसी व्यक्ति विशेष का।

अंग्रेजी शब्द ''सोशलिज्म' के जन्म के बारे में विद्वानों में मतभेद हैं। सर्वप्रथम समाजवाद शब्द का प्रयोग सन् 1803 ई0 में इटली में किया गया लेकिन इसका सन्दर्भ आधुनिक नहीं था। सन् 1827 ई0 में ''लंदन कोआपरेटिव मैगजीन'' में इंग्लैण्ड के विचारक रार्बट ओवन के अनुयायियों को सम्बोधित करने के लिए इसका प्रयोग किया गया। और इसके कुछ वर्ष बाद ही राबर्ट ओवन के अनुयायी अपने आपको ''समाजवादी'' कहने लगे थे। सन् 1833

PART SAMPLE

ई0 में फ्राँस की एक पत्रिका 'लेम्लोब' में सेण्ट साइमन के सिद्धान्त को स्पष्ट करने के लिये भी इस शब्द का प्रयोग किया गया था। सन् 1840 ई0 तक 'समाजवाद' शब्द का समूचे यूरोप में प्रयोग होने लगा और व्यापक रूप से इसका अर्थ यह समझा जाने लगा कि उत्पादन के साधनों –पूँजी, भूमि अथवा सम्पत्ति पर समूचे समाज का नियंत्रण अथवा स्वामित्व होना चाहिए और उनका प्रशासन सबके हितों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। यह अलग बात है कि गत 150 वर्षों में समाजवाद का विचार संसार के प्रायः सभी भागों में फैल चुका है और अब देश अथवा क्षेत्र विशेष की परम्पराओं के अनुरूप अरब समाजवाद, अफ्रीकी समाजवाद, एशियायी समाजवाद, भारतीय समाजवाद, हिन्दू समाजवाद, गाँधीवादी समाजवाद जैसे शब्द बंधों का भी प्रयोग देखने को मिलता है।

यूरोप में औद्योगिक क्रान्ति के पूर्व कुटीर उद्योग थे। इनमें कारीगर, मजदूर अपने परस्पर सहयोग से कार्य करते थे और पूँजी, श्रम और औजारों का उपयोग वे अपने ढंग से करते थे। उनमें परस्पर संघर्ष नहीं था। उनको व्यवसाय अपनाने की स्वतंत्रता थी, पर उन्नीसवीं सदी में यूरोप में मशीनों और वैज्ञानिक आविष्कारों का उपयेाग उद्योग व्यवसायों में हुआ, कल–कारखानों में वृद्धि हुई, उत्पादन अत्यधिक बढ़ा। अनेक औद्योगिक नगरों की स्थापना हुई। कुटीर उद्योगों के अनेक बेकार कारीगर और मजदूर इन नवीन बड़े कारखानों में काम करने लगे। यह औद्योगिक क्रान्ति थी।

इस औद्योगिक क्रान्ति के परिणाम स्वरूप कल कारखानों में कार्यरत श्रमिकों की दयनीय दशा थी। उनके श्रम के घंटे अधिक थे, पर वेतन अत्यधिक कम। कारखानों में उनकी सुरक्षा की कोई व्यवस्था नहीं थी। औद्योगिक नगरों में वे ऐसे गंदे तथा तंग मकानों और झोपड़ियों में रहते थे, जो उनके स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त ही हानिकारक थे। स्त्रियों और बच्चों को भी कारखानों में काम पर लगाया जाता था। उनसे भी अधिक काम लिया जाता था। पर स्त्रियों को समान काम के लिये भी कम वेतन मिलता था। बच्चों की स्थिति दयनीय थी। श्रमिकों का जीवन अत्यन्त दुरूह हो गया था। उनका सामाजिक और नैतिक जीवन निम्न स्तर का था।

औद्योगिक क्रान्ति के और पूँजीपति वर्ग के उत्कर्ष के परिणामस्वरूप मजदूरों का श्रम, पूँजी और औजारों पर नियंत्रण नहीं रह गया। पूँजीपतियों का उत्पादन के साधनों पर नियंत्रण था और वे विशाल कारखानों के स्वामी

थे। वे धन सम्पन्न होने से जीवन की सभी सुख सुविधायें प्राप्त कर लेते थे। इसके विपरीत श्रमिक वर्ग दिन–रात परिश्रमरत रहता था और पूँजीपति के लिये अधिकाधिक धन उत्पन्न करता था पर वह स्वयं निर्धन रहता था। श्रमिकों को उस धन व पूँजी का बहुत कम भाग प्राप्त होता था जिसका वे उत्पादन करते थे। पूँजीपति ही उस पूँजी का अधिकांश भाग प्राप्त करते थे। इस प्रकार पूँजीपति श्रमिकों का शोषण करते थे। जब श्रमिकों में अपने अधिकारों और दयनीय दशा की चेतना हुई, तब उन्होंने अपनी दशा सुधारने और अधिकारों को प्राप्त करने के लिए हड़तालें और आन्दोलन किये। इससे श्रमिकों और पूँजीपतियों के मध्य वर्ग संघर्ष प्रारम्भ हो गया।

उद्योगपतियों, पूँजीपतियों और श्रमिकों के दो वर्गों के अतिरिक्त औद्योगिक क्षेत्र में बुद्धिजीवियों के एक नवीन वर्ग का भी उदय हुआ। कल–कारखानों और उद्योगों का ठीक से संचालन करने के लिए कच्चे माल व बने हुये माल का ठीक और पूर्ण हिसाब–किताब रखने के लिए कार्यालयों में समुचित व्यवस्था, व्यापार तथा उत्पादन नीति निर्धारित करने के लिये उद्योग – व्यवसायों में विशिष्ट योग्यता वाले बुद्धिजीवियों का कल–कारखानों और औद्योगिक क्षेत्र में बड़ा प्रभाव व महत्व रहा। इन बुद्धिजीवियों ने श्रमिकों की हृदय विदारक दुर्दशा को देखा। उन्होंने इस सम्बन्ध में समाचार पत्रों, मासिक पत्रों और पुस्तकों के माध्यम से श्रमिकों की दशा सुधारने के लिये अपने विचार व्यक्त किये, कई सुझाव प्रस्तुत किये। उन्होंने शासन ओर समाज में पूँजीपतियों के बढ़ते हुये वर्चस्व, श्रमिकों के निरन्तर शोषण तथा इससे उत्पन्न सामाजिक और आर्थिक विसंगतियों और विषमताओं की ओर जनसाधारण का ध्यान खींचा और इनके निराकरण के लिये कुछ उपाय भी सुझाये।

अन्य दार्शनिकों, विद्वानों और विचारकों ने भी श्रमिकों और पूँजीपतियों के वर्ग–संघर्ष के निराकरण के लिये, श्रमिकों की आर्थिक और सामाजिक दशा सुधारने के लिये तथा उनकी श्रम सम्बन्धी समस्याओं के समाधान के लिये चिन्तन मनन करके अनेक सिद्धान्त प्रतिपादित किये। इन्हीं श्रेष्ठ विचारों और सिद्धान्तों को समाजवाद कहा गया।

यूरोप के विपरीत भारत में समाजवादी अवधारणा के विकास का मुख्य कारण ब्रिटेन की साम्राज्यवादी भावना, भारत का आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक शोषण जिसके कारण भयंकर गरीबी, बेकारी, कृषि पर निर्भरता

का बढ़ना, उत्पादन क्षमता में अत्यधिक कमी आ जाना, माना जाता है। अंग्रेजों के पहले जो भी विजेता आये थे उन्होंने केवल राजनीतिक दृष्टि से वंश परिवर्तन ही किया ओर आर्थिक व्यवस्था के सामाजिक गठन व सम्बन्धों को पूर्णतया परम्परागत भारतीय व्यवस्था के अनुकूल ही रहने दिया। साथ ही वे स्वयं 'हिन्दुस्तान में समा गए क्योंकि वे सब ऐसे बर्बर विजेता थे जिन पर एक उच्चतर संस्कृति ने विजय प्राप्त कर ली। लेकिन अंगेज पहले ऐसे विजेता थे जिन्होंने प्रारम्भिक समाज को तोड़कर, प्राचीन उद्योगों को तो समाप्त किया ही, साथ ही प्रारम्भिक समाज में जो कुछ उच्चतर था उसको भी समाप्त कर दिया।'' अंग्रेज अपने देश में सामंती व्यवस्था को समाप्त कर और पूँजीवादी व्यवस्था की स्थापना करके आधुनिक युग में पर्दापण कर चुके थे। नई भौतिकवादी व्यवस्था के अनुरूप ही वे अपने यहाँ सामाजिक, आर्थिक, एवं नैतिक मानदण्डों की स्थापना कर चुके थे। निश्चय ही भारतीय सभ्यता, संस्कृति व सामाजिक आर्थिक व्यवस्था, जो उनके आगमन के समय पुरातन समाज में जी रही थी, उनकी तुलना में निम्नतर थी। यो भी पूँजीवादी राष्ट्र सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से सामंती जनजीवन की अपेक्षा, अधिक शक्तिशाली होता है। क्योंकि वह उन्नत उत्पादन– तकनीक पर आधारित होता है। यही कारण है कि अपने साम्राज्यवादी, भौतिकवादी हितों के अनुरूप उन्होंने परम्परागत भारतीय व्यवस्था को नष्ट करके नई व्यवस्था को जन्म दिया।

ब्रिटिश सरकार द्वारा भू–राजस्व की नई व्यवस्थायें लागू की गई। इनमें मुख्य थे– स्थायी बन्दोबस्त रैयतवारी बंदोबस्त तथा महालवारी व्यवस्था। ब्रिटिश भू–राजस्व के बड़े दूरगामी परिणाम निकले। इसने पूर्व प्रचलित मान्यताओं तथा व्यवस्थाओं को तोड़कर, अर्थव्यवस्था तथा सामाजिक जीवन में बुनियादी परिवर्तन किया और पुरानी ग्रामीण आत्मनिर्भरता की स्थिति को समाप्त कर दिया। ''स्थायी बन्दोबस्त ने एक ऐसे कुलीन वर्ग को जन्म दिया जो कि भारतीय सामाजिक व्यवस्था के अनुकूल नहीं थी। इसने प्रारम्भ में सरकार को स्थायित्व दिया और गरीब ग्रामीण कृषक को और भी गरीब बनाया।'' नई कृषि व्यवस्था ने भारत की सदियों पुरानी व्यवस्था को तोड़कर नई साम्राज्यवादी व पूँजीवादी शक्ति के लिए शोषण के द्वार खोल दिये। आर्थिक दृष्टि से इन व्यवस्थाओं ने सभी वर्गों (जमींदार से लेकर रैयत तक) को प्रभावित किया। रैयत ओर जमींदार के बीच लगान का निर्धारण एक

आपसी मामला मानकर छोड़ दिया गया था। इसीलिये जमींदार कृषक से जितना भी धन बटोर सकता था, बटोरता था। इसमें कोई शक नहीं कि सब भुगतानों के बाद किसान के पास जो कुछ बचा रहता था उससे वह जिंदा भर रह सकता था।

भारत में उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध और बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में सभी राष्ट्रीय चिंतक समाजवाद के बारे में सोचने लगे। विवेकानन्द जी ने भारतीयों की गरीबी का सजीव वर्णन किया है। तत्पश्चात इसी गरीबी, शोषण और उससे निजात पाने के तरीके तलाशने में विचारकों को समाजवाद के अतिरिक्त कोई दूसरा तरीका नजर नहीं आया। ''सिर्फ समाजवादी तरीकों से ही इसका हल निकल सकता है। एक ऐसी बड़ी स्कीम बनाई जाये जिसका असर खेती बाड़ी, उद्योग–धन्धों, संचार व्यवस्था, शिक्षा और समाज–सेवा के कामों पर पड़े, जिनका देहांती इलाकों में शायद ही कोई इंतजाम है। खेती बाड़ी को बड़े पैमाने पर सहयोगी और सामूहिक खेती की बुनियाद पर खड़ा करना होगा, बड़े उद्योगों और कुटीर उद्योगों को तेजी से आगे बढ़ाना होगा और शिक्षा, सफाई, सड़कों, सिंचाई, और मकानात के काम को बहुत कुछ रूस के तरीके पर अंजाम देना होगा।''

भारत में समाजवादी विचारधारा का प्रवेश राष्ट्रीय आन्दोलन के आरम्भ से ही हो गया था। राष्ट्रीय आन्दोलन का लक्ष्य देश के लिये राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करना ही नहीं था बल्कि राष्ट्रीय स्वतन्त्रता तो समतायुक्त और न्याययुक्त समाज की स्थापना के लिये एक सोपान मात्र थी। उन्नीसवीं शताब्दी में भारतीय पुनर्जागरण के प्रमुख कर्णधारों, रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी राम तीर्थ और दयानन्द सरस्वती ने समस्त वर्गों की स्वतंत्रता तथा समता के सिद्धान्तों का समर्थन किया था। राष्ट्रीय नेताओं ने भारतीयों के लिये जिस स्वराज्य की कल्पना की थी, उसमें देश के सभी नागरिकों के लिये सामाजिक और आर्थिक न्याय का विधान था। आचार्य नरेन्द्र देव, जय प्रकाश नारायण, डॉ0 राम मनोहर लोहिया, अशोक मेहता, मीनू मसानी, जवाहर लाल नेहरू, सुभाष चन्द्र बोस इत्यादि नेता सन् 1910 ई0 से ही इस दशा में विचार करने लगे थे कि हमारा लक्ष्य एक न्यायपूर्ण आर्थिक सामाजिक व्यवस्था होना चाहिए। इन्होंने असहयोग आन्दोलन (सन् 1920–21) में पूरी शक्ति के साथ भाग लिया। परन्तु सन् 1922 में असहयोग आन्दोलन के स्थगन के साथ उन्होंने किसानों, मजदूरों को संगठित करने और

भारत के सबसे प्रमुख राजनीतिक संगठन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को इस दिशा में आगे बढ़ाने के लिए उस पर निरन्तर दबाव डालने की आवश्यकता अनुभव की। सन् 1925 से 1928 के काल में बंगाल, बम्बई, पंजाब तथा उत्तर प्रदेश में अनेक किसान मजदूर पार्टियाँ गठित हुई। ''सन् 1920 ई0 में लाला लाजपत राय ने पहली ''भारतीय मजदूर महासंघ'' की अध्यक्षता की। सन् 1924 ई0 में ''केन्द्रीय किसान सभा'' की इलाहाबाद में स्थापना हुई।'' मद्रास कांग्रेस अधिवेशन (सन् 1927) में पहली बार वामपंथी खेमे का प्रभाव दिखाई दिया सुभाष चन्द्र बोस एवं जवाहर लाल नेहरू के नेतृत्व में युवा वर्ग ने एक प्रस्ताव पास करके कांग्रेस को 'पूर्ण स्वराज्य का लक्ष्य' स्वीकार करने पर मजबूर किया।

सन् 1931 ई0 में सुभाष चन्द्र बोस एवं पं0 नेहरू के नेतृत्व में 'ऑल इण्डिया इण्डिपेन्डेन्स फॉर इण्डिया ली'' की स्थापना की गयी, जिसका लक्ष्य आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक स्वाधीनता को प्राप्त करना था। 9, 10, 11 अक्टूबर 1933 को पं0 नेहरू ने 'भारत किधर' (Whether India) शीर्षक से कई लेख लिखे जिनमें उन्होंने इस अहम मुद्दे को उठाया कि – ''हम किसकी आजादी के लिये लड़ रहे हैं।''

आर्य समाजी स्वामी सहजानंद सरस्वती ने बिहार तथा उत्तर प्रदेश के किसानों में घूम–घूमकर देश की स्वाधीनता और आर्थिक शोषण से मुक्ति के लिये ज्वाला धधकाई। सन् 1930 ई0 में उन्होंने 'किसान सभाओं,' की स्थापना की जिन्होंने भविष्य में स्थपित होने वाले 'कांग्रेस समाजवादी दल' के आधार का कार्य किया। भारत में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अन्दर वामपंथी का उदय समाजवाद के विकास में, एक महत्वपूर्ण घटना थी। वास्तव में यह सोवियत संघ की प्रगति, विश्व के अन्य देशों के साम्राज्यवाद विरोधी एवं राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन, देश की बिगड़ती आर्थिक स्थिति, बढ़ता हुआ साम्राज्यवादी शोषण, मजदूर किसानों तथा कम्युनिस्ट आन्दोलन की वृद्धि का परिणाम था। सन् 1926–27 ई0 के यूरोप के दौरे ने पं0 नेहरू को नए विचार दिये। सन् 1927 ई0 में उन्होंने पराधीन देशों की ब्रुसेल्स कांग्रेस में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का प्रतिनिधित्व किया था। ब्रुसेल्स कांग्रेस ने साम्राज्यवाद विरोधी संघ की स्थापना की थी। सन् 1927 ई0 में ही नेहरू जी ने रूस का भी दौरा किया। स्वभावतः वामपन्थी विचारों का उन पर प्रभाव पड़ा और उन्हें भारत की समस्याओं का समाधान समाजवाद में ही दिखा।

सन् 1934 ई0 में कांग्रेस समाजवादी दल का जन्म हुआ। इसे वामपंथी सुधारवाद का नाम दिया गया। परन्तु इससे पूर्व ही कांग्रेसियों के जेल अध्ययन में 'भारतीय समाजवाद' का बीज पड़ा। इस समाजवादी आन्दोलन के बीज को पोषित करने वालों में सर्वप्रथम जय प्रकाश नारायण, अच्युत पटवर्धन, एम.एम. जोशी, अशोक मेहता, मीनू मसानी, तथा एम0एल0 दन्तवाला थें वास्तव में सन् 1932 ई0 में नासिक जेल में ही समाजवादी दल की नींव पड़ चुकी थी।

इस प्रकार भारतीय पृष्ठभूमि में समाजवाद की समीक्षा करते हुये कहा सकते हैं कि सामन्ती शोषण का अन्त, तीव्र औद्योगीकरण, सहकारिता का विकास, पंचायती राज, बैंको का राष्ट्रीयकरण, प्रिवीपर्स एवं विशेषाधिकारों की समाप्ति और योजना सम्बन्धी कार्य तो देश में सफलतापूर्वक हुए हैं लेकिन समाजवाद के मूल तत्वों का इन कार्यक्रमों में सदैव अभाव रहा है। सामाजिक एवं आर्थिक असमानता आज भी समाज में पूर्व के समान ही मौजूद हैं। 50 वर्षों में जिन समाजवादी नीतियों पर हम जोर देते आये हैं वह समाजवादी 'पैटर्न' का समाज आज तक फलीभूत नहीं हो पायीं, यही नहीं भारतीय संविधान में 'समाजवाद' शब्द 42वें संवैधानिक संशोधन से सन् 1976 में, उद्देशिका में जोड़ा गया। ऐसा लगता है कि सरकार एवं समाजवादियों की मंशा ही भिन्न रहती थी। ऊँच–नीच, अमीर–गरीब, विकसित–अविकसित, पूँजी का केन्द्रीयकरण सामाजिक असमानता आज भी हमारे समाज में विद्यमान है क्योंकि पूरी शक्ति और इच्छा से इसे लागू करने की किसी में भावना ही नहीं थी। इसका मुख्य कारण यह है कि हमारे यहाँ समाजवाद के रूप में और उसके सिद्धान्तों को लेकर एक अजीब धुंधला पन छाया हुआ है। हमारे नेताओं ने कभी भी देश में स्थापित होने वाले समाजवाद की रूपरेखा प्रस्तुत नहीं की है। इस प्रश्न को नेतागण भविष्य के लिये स्थगित कर देते हैं कि भावी समाजवाद परिस्थितियों के अनुसार स्थापित किया जायेगा। इसकी पूर्व व्याख्या करना उचित नहीं है। इसके साथ ही स्वार्थपरता, प्रशासन में ढीलापन, जातिवाद, क्षेत्रीयवाद और पदलिप्सा जैसी कुत्सित धारणाएं अपनी जड़े जमाये हुये हैं। यदि भारत में वास्तविक अर्थों में समाजवाद की स्थापना करना है तो सर्वप्रथम भारतीय समाजवादियों को स्वयं अपने चरित्र द्वारा जनसामान्य के समक्ष उच्च आदर्श प्रस्तुत करने होंगे।

समाजवाद की स्थापना के ढंग में किसी प्रकार की विभिन्नता आ सकती है, लेकिन समाजवाद का मूल उद्देश्य एवं आन्तरिक विचार सदैव अपरिवर्तनीय होता है। समाजवाद की स्थापना के लिये आवश्यकता शासन में न्यायपूर्ण और जनहित के लिये आवश्यक कार्य प्रणाली ओर शासन कुशलता की है। समाजवादी दलों की असफलता का प्रमुख कारण समाजवादी नेताओं में आपसी एकता की कमी थी। इसका प्रभाव उनके दल के संगठन पर पड़ना स्वाभाविक ही था। आपसी आन्तरिक संघर्षों की वजह से जनता का विश्वास प्राप्त करने में वे असमर्थ रहे हैं।

भारत में समाजवाद की स्थापना के लिये प्रारम्भ से ही विचारकों एवं नेताओं ने अथक प्रयास किये हैं। और कुछ बुद्धिजीवी एवं नेता अभी भी इस प्रयास में संलग्न हैं। पं0 जवाहर लाल नेहरू ने समाजवाद के विकास हेतु अथक प्रयास किया, शुरू से लेकर मृत्यु तक इस विचारधारा को उन्होंने अपने हृदय से नहीं निकाला। लेकिन वे अपने उद्देश्यों में सफल नहीं हो सके। इस पुस्तक को तैयार करने के लिए मेरे सभी मित्रों, सहयोगियों और सबसे महत्वपूर्ण परिवार के सदस्यों को हृदय से आभार। जिनके सहयोग के बिना इस पुस्तक का प्रकाशन असम्भव होता है।

नमूना SAMPLE

विषय सूची

	प्रस्तावना	*v*
1.	समाजवाद की संकल्पना	1
2.	भारत में समाजवाद	51
3.	समाजवादी विचारधारा आधारित प्रमुख भारतीय राजनीतिक दल	101
4.	पं. नेहरू के विचार में समाजवाद का राजनीतिक–सामाजिक स्वरूप	153
5.	समाजवाद का संस्थापन तथा नेहरू	194
	सारांश	216
	संदर्भ ग्रन्थ सूची	*236*

नमूना SAMPLE